भारतीय ग्रामीण समुदाय के परिवर्तित परिदृश्य

डा0 प्रमोद वर्मा
असिस्टेंट प्रोफेसर (समाजशास्त्र विभाग)
सरदार भगत सिहं संघटक राजकीय
महाविधालय,ढका खुर्द पुवायाँ,शाहजहाँपुर

शोध सारांश

परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत नियम है, जिसमे मानव समाज अछूता है।लेकिन नही गाँव के आकार में वृद्धि, प्रकृति पर निर्भरता में कमी, ग्रामीण एकता में कमी, परिवार की संरचना संयुक्त से एकाकी की ओर, पारिवारिक कार्यों व पारिवारिक सम्बन्धों में शिथिलता, पारिवारिक सहयोग में कमी, वैवाहिक क्षेत्र में बालविवाह में कमी, विधवा पुनर्विवाह में वृद्धि, वैवाहिक विच्छेद में वृद्धि, अन्तर्जातीय व प्रेम विवाह में वृद्धि, विवाह से सम्बन्धित नियमों में शिथिलता आई है तथा नातेदारी में कमी आई है। जाति पंचायतोंके महत्व का ह्रास, जजमानी व्यवस्था समाप्त प्रायः हो गया है।

मुख्य शब्दवली –ग्रामीण समुदाय, परिवार, विवाह,नातेदारी,जातिव्यवस्था ,जजमानी व्यवस्था।

विषय प्रवेश – परिर्वतन की अवश्यम्भाविता व निरन्तरता के कारण कोई भी समाज परिवर्तन से अछूता नहीं है। भारतीय ग्रामीण समाज तुलनात्मक रूप से स्थाई व अपरिवर्तनशील माना जाता रहा है। जैसा कि नजमुल करीम ने भारतीय ग्रामीण समाज के सन्दर्भ में लिखा है ''एक राजवंश के बाद दूसरा राजवंश समाप्त होता गया क्रान्ति के क्रान्ति होती गयी, परन्तु ग्रामीण समुदाय आज भी लगभग पूर्ववत'' जिमरमैन ने भी ग्रामीण समुदाय को घड़े में शान्त जल की तरह माना है। लेकिन उक्त विद्वानों की मान्यताएँ बदलते परिवेश में पूर्ण सत्य नहीं प्रतीत होता है, क्योंकि भारतीय ग्रामीण समाज में परिवर्तन दिखाई देने लगे हैं। यह परिवर्तन कुछ तो नियोजित योजनाओं यथा ग्रामीण समुदायिक विकास योजना, पंचायती राज व्यवस्था व विभिन्न सामाजिक अधिनियमों के परिणाम स्वरूप हुए है और कुछ सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रियाओं यथा शहरीकरण, औद्योगीकरण पश्चिमीकरण, लौकिकीकरण, आधुनिकीकरण व वैश्वीकरण के कारण हुए हैं।

यातायात व संचार माध्यमों में हुए क्रान्ति के फलस्वरूप विश्व ग्राम (Golbal Village) की अवधारणा का विकास हुआ है। फलतः ग्रामीण समुदाय जो प्रारम्भ में स्वयं एक आत्म निर्भर इकाई थी वह वर्तमान में परिवर्तित होकर अन्य गाँव की तुलना में नगरों से जुड़ गया है। वर्तमान में ग्रामीण समुदाय का कोई भी ऐसा पक्ष नहीं है,जहाँ परिवर्तन न हुआ हो। ग्रामीण समुदाय में हुए परिवर्तनों का विभिन्न समाजशास्त्रिओं व मानवशास्त्रिओं ने अध्ययन किया है, जिनमें ए0आर0 देसाई, मैकिम मेरियट, एम0 एन0 श्रीनिवास, डी0जी0 मेंडलवाम, योगेन्द्र सिंह, डी0एन0 मजूमदार[1] कैथलिन गफ, पोकॉक मिल्टन सिंगर, बी0एस0 कोहन आदि प्रमुख हैं। इन विद्वानों के अध्ययनों व प्रस्तुत अध्ययन से प्राप्त तथ्यों के आधार पर वर्तमान ग्रामीण समुदाय में हुए परिवर्तनों का विश्लेषण निम्नवत किया जा सकता हैः–

प्रस्तुत लेख का उदेश्य– उन कारको का विश्लेषण करना है जो भारतीय ग्रामीण समुदाय के परिवर्तित परिद्रश्य के मार्ग मे एकाधिक कारक है

अध्ययन विधि– प्रस्तुत अध्ययन द्वितीय तथ्यो पर आधारित विश्लेश्णात्मक प्रकृति की है।

1 गाँव के आकार में परिवर्तन– भारतीय ग्रामीण समुदाय का आकार छोटा होता है टी0एल0 स्मिथ[2] ने लिखा है लघु समुदाय और ग्रामीण समुदाय एक दूसरे के पर्यायवाची बन गये हैं। ग्रामीण समुदाय का यह लक्षण इनती महत्वपूर्ण है कि राबर्ट रेड फिल्ड[3] ने इसके लिए लघु समुदाय का सम्बोधन विकसित किया। वैसे भी गाँव की जनसंख्या अधिकत्तम पाँच हजार मानी गयी है और जनसंख्या के आधार पर गाँव का वर्गीकरण भी किया गया है। लेकिन वर्तमान में गाँव के आकार में वृद्धि हो रही है। वर्तमान भारत में वैसे गाँवों की संख्या बढ़ रही है जिसकी जनसंख्या दस हजार से अधिक है।

2 प्रकृति पर निर्भारता में कमी– विश्व के समस्त ग्रामीण समुदाय प्रकृति के न सिर्फ निकट थी बल्कि उस पर निर्भर भी थी। जैसा कि सोरोकिन एवमं जिमरमैन[4] ने लिखा है ''अधिकतर ग्रामीण एक नगरवासी की तुलना में अत्यधिक महान धनिष्टम रूप में तथा प्रत्यक्षतः प्रकृति से सम्बन्धित है। ऐसी प्रकृति से जिससे मिट्टी, भू–भाग विशेष की वनस्पति, पशु आदि, जल, नदी, सूर्य, चन्द्र, आकाश, वायु, वर्षा आदि सभी सम्मिलित हैं। जबकि वह मकान में रहता है, तब उसके खेत में स्थित मकान की अथवा झोपड़ी की केवल मात्र पतली दिवारे उसको प्रकृति से अलग करती हैं, और जबवह बाहर होता है, तो हर समय

प्रकृति के बीच में रहता है, चाहे कुछ भी हो'' बर्ट्रेण्ड एवम् अन्य[5] ने लिखा है कि ''प्रकृति से सामना करने में वह रीति, रिवाजों, व्यवहारों तथा व्यक्तित्व की विशेषताओं को प्रकृति के संघर्ष के अनुकूल विकसित करता है। लेकिन वर्तमान में ग्रामीण समुदाय प्रकृति से प्रत्यक्ष सम्बन्ध से संशोधित सम्बन्ध की ओर बढ़ रही है। अब गाँव में भी गर्मी से बचने के लिए विधुत, पंखे, कुलर एवम वातानुकूलित का प्रयोग होने लगा है। ठन्ड से वचने के लिए हिटर, ब्लोअर, का प्रयोग होने लगा है। ठन्डे जल के लिए फ्रिज का प्रयोग होने लगा है।

3 ग्रामीण एकता में कमी–भारतीय ग्रामीण समुदाय में तुलनात्मक रूप से अधिक सामाजिक एकता पायी जाती थी। इसका कारण यह है कि गाँव में सामान जीवन शैली, समान्य उद्देश्य व सामान्य अनुभव पर आधारित होती है। जैसा कि बर्ट्रेण्ड[6] एवम अन्य ने लिखा है''ग्रामीण रंगमंच में एकता यत्रवत है, सम्भाव पूर्ण एकीकरण की कुंजी है। ग्रामीण एकता के सन्दर्भ में स्मिथ[7] ने भी लिखा है कि ''ग्रामीण एकता अत्यधिक अनौपचारिक तथा असंविदा युक्त सम्बधों पर आधारित है।''

लेकिन वर्तमान में ग्रामीण समुदाय की एकता में तीव्र गति से कमी आ रही है। वहाँ गुटबन्दी, की प्रघटना, बढ़ी हैं। प्रत्येक गाँव कई गुटों में विभाजित है और एक गुट दूसरे गुट की जानी दुश्मन बने हुए हैं। यही कारण है कि ए0सी0 दूबे, टी0के0 ओमेन, योगेश अटल इत्यादि ने भारतीय ग्रामीण समाज में प्रभू जाति के स्थान पर ग्रामीण गुटवन्दी का सुझाव दिया है। ग्रामीण गुटबन्दी शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग आर0फर्थ ने अपने लेख इन्ट्रोडक्शन टू फैक्शनस इन इण्डियन एण्ड ओभर सि इण्डियन सोसाइटी जो ब्रिटीश जरनल ऑफ सोशियोलाजी में प्रकाशित हुआ। अर्थात् गुट वह छोटा समूह है, जो अपने लक्ष्यों की पूर्ति हेतु अपने विरोधी समूहों से संघर्षरत रहता है।परिणाम स्वरूप प्रत्येक गाँव में हत्या, बलात्कार, चोरी, डकैती, अपहरण, मार–पीट की घटना आम हो गई है। इस प्रकार ग्रामीण एकता में काफी कमी आयी है।

4 ग्रामीण समुदाय के सामाजिक आयाम में बदलावः – सामाजिक क्षेत्र के अन्तर्गत परिवार, विवाह नातेदारी, जाति व्यवस्था, जजमानी व्यवस्था, शिक्षा, स्त्रिओं की स्थिति, सामुदायिता की भावना, मनोरंजन, इत्यादि आते हैं। अब एक–एक पक्ष में हुए परिवर्तनों का विश्लेषण निम्नवत हैः–

5 परिवारिक जीवन में परिवर्तन–डी0 एन0 मजूमदार का कथन है कि परिवार आज भी वैसा ही है जैसा कि पहले था। परन्तु साथ ही वह जैसा आज है, वैसा पहले नहीं था।'' ग्रामीण समाज की विशेषताओं में परिवार की प्रधानता रही है। इसके लिए परिवारवाद या परिवारात्मकता की अवधारणा का प्रयोग किया गया है, क्योंकि लोग पारिवारिक हितों को सर्वश्रेष्ठ मानते थे। जैसा कि बर्गेस एण्ड लॉक[8] ने लिखा है ''सामान्य रूप में परिवारवाद का अर्थ पारिवारिक समूह का कल्याण है, जिसमें व्यक्तिगत सदस्यों का हित अधिनस्थ हो जाता है। लेकिन वर्तमान में परिवारात्मकता में कमी आने के कारण पारिवारिक क्षेत्र में अधोलिखित परिवर्तन आए हैं–

1 परिवार के प्रकार्य में परिवर्तनः– परिवार व्यक्ति के जन्म से लेकर मृत्युपरान्त कई महत्वपूर्ण कार्य करते थे। जिनमें बच्चों का जन्म, पालन–पोषण, शिक्षा, स्वास्थ्य व विवाह के साथ–साथ आर्थिक सुरक्षा भी सम्मिलित थी। लेकिन वर्तमान में परिवार के कार्यों में कमी आई है। अब गाँव में भी ऐसे परिवार हैं, जिनमें बच्चों का पालन आया या नौकरानी के द्वारा किये जा रहे हैं, एवं बहुत ही कम आयु में उन्हें प्ले स्कूल या क्रच में भेज दिया जाता है। वर्तमान में युवक युवतियाँ, वैवाहिक निर्णय स्वयं करने लगे हैं। एवं आर्थिक या व्यवसाय पर निर्णय स्वयं लेने लगे है। इस प्रकार परिवार की संरचना के साथ–साथ परिवार के सदस्यों के बीच सम्बन्धों एवं इसके कार्यों में परिवर्तन आये हैं।

2 पारिवारिक सहयोग में कमी :– पूर्व में परिवार के सदस्य एक दूसरे के सुख–दुःख में साथ निभाते थे। लेकिन वर्तमान में अब परिवार के सदस्यों के बीच सहयोग में कमी आयी है। परिवार के सदस्यों के बीच आपसी खान–पान व बोल–चाल तक बंद रहता है। वे एक–दूसरे को अधिक–से–अधिक हानि पहुँचाने की सोचते हैं। कई परिवारों में भाई–भाई यहाँ तक पिता–पुत्र में मुकदमेबाजी हो रही है।

3 विवाह संस्था में परिवर्तन :विवाह प्राचीनतम संस्थाओं में एक है। यद्यपि दुनिया के प्रत्येक समाज में विवाह, प्रचलित है लेकिन भारतीय समाज में विवाह का विशेष महत्व है। भारत में विवाह को एक आवश्यक व धार्मिक संस्कार स्वीकार किया गया है। विवाह के नियम के अन्तर्गत ग्राम वर्हिविवाह भी एक महत्वपूर्ण नियम है, जिसके अन्तर्गत कोई भी व्यक्ति गाँव में विवाह नहीं कर सकता या जैसा की आस्कर लेविस[9] ने लिखा है ''एक

दूल्हा कभी भी उस ग्राम से नहीं चुना जाना चाहिए जिसमें भावी दुलहिन रहती है। यह नियम आगे चलकर इस प्रकार विस्तृत किया गया है कि कोई ग्राम जिसकी भूमि दुलहिन के ग्राम की भूमि को छूती हो अथवा चार ग्राम इकाइयों की भूमि को जिसका एक ग्राम रामपुर भी है, छूती हो तो वहाँ से भी दूल्हा नहीं चुना जाना चाहिए। इतना ही नहीं वरन् वह ग्राम भी छोड़ दिया जाना चाहिए, जिसमें कि अपने गोत्र का अच्छा–खासा प्रतिनिधित्व है।'' यद्यपि दक्षिण भारत में ग्राम अन्तर्विवाह पाया जाता है। विवाह अपने जाति के अन्तर्गत ही अनिवार्य माना गया है। उच्च वर्णनीय लोगों में विधवापूनर्विवाह वर्जित था। विवाह अधिकांशतः परिवार के सदस्यों द्वारा तय किये जाते थे। विवाह होने के पश्चात् उसे तोड़ पाना असम्भव सा था, क्योंकि इसे सात जन्मों का सम्बन्ध माना गया है। लेकिन समकालीन विवाह से सम्बन्धित उक्त मान्यताओं में कई परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं। अब गाँव में विलम्ब विवाह, अन्तर्जातिय विवाह, प्रेम विवाह, विधवापुनर्विवाह होने लगे हैं। विवाह के निर्णय में युवक–युक्तियों की राय महत्वपूर्ण होती जा रही है। विवाह के रीति रिवाजों में काफी परिवर्तन देखने को मिल रहा है। दहेज के प्रति युवक–युवतियों कीमनोवृत्ति में परिवर्तन आया है।अब वर की निर्धारण में लड़के के परिवार वंश आदि के वजाय उसकी शिक्षा, आय व व्यवसाय पर बल दिया जा रहा है। विवाह के उम्र में वृद्धि हुई है। अब युवक आत्म निर्भर होने के पश्चात् ही विवाह करना पसन्द करते हैं। वैवाहिक सम्बन्धों में शिथिलता आई है। अब गाँव में भी विवाह विच्छेद एवं पुनर्विवाह की घटनाएँ बढ़ रही हैं। बहु विवाह की प्रथाएँ लगभग समाप्त सी हो गई हैं।

4 जाति प्रथा में परिवर्तन– जाति भारतीय सामाजिक संस्तरण का मुख्य आधार रहा है, जो ब्राह्मणों की संर्वोच्चता व क्रमिक असमान्ता पर आधारित है। परम्परागत ग्रामीण समुदाय में जाति व्यवस्था से सम्बन्धित मान्यताओं का अनुपालन कठोरता के साथ किया जाता था,जिनमें सम्बोधन, सहवास, सहभोज व वैवाहिक सम्बन्ध प्रमुख हैं। जाति व्यवस्था में उच्च स्थान रखने वाली जातियों की सदस्यों को तुलनात्मक रूप से निम्न जाति के सदस्य आदर व सम्मान सूचक शब्दों से सम्बोधित करते थे जबकि ऊँची जाति के लोग निम्नजाति के सदस्यों को उपेक्षित व तिरस्कार युक्त शब्दों से सम्बोधित करते थे।

इसी प्रकार प्रत्येक गाँव का बसाव जातिगत टोलों में बसे होते थे। गाँव के मुख्य भागों में ऊँची जाति उसके आस–पास सपृश्प जातिया (जिनको छुआ जा सके) तथा गाँव

की परिधि या गाँव के बाहर अस्पृश्यजातियां बसी होती थीं। उत्तर भारत के अधिकांश प्राचीन गाँव के प्रायः दक्षिण दिशा में अस्पृश्य लोगों को वसाय जाता था। जैसा कि आर0के0 ठाकुर अपने अध्ययन के आधार पर लिखा है कि इसके दो कारण थे– प्रथम हिन्दू मान्यता के अनुसार दक्षिण दिशा अशुभ माना जाता है, जो कि मृत्यु के देवता यमराज के आगमन का मार्ग है एवं द्वितीय इस क्षेत्र की भौगोलिक दशा यह है कि वर्ष के अधिकांश महीनों में पूरब–पश्चिम की हवाएँ चलती है। इसलिए अछूत के घरों से होकर उनकी ओर अशुद्ध हवाएँन आ जाये।

खान–पान का सम्बन्ध भी प्रतिबन्धित था। ब्राह्मण स्वयं अपनी जाति के अतिरिक्त कुछ अन्य जातियों के यहाँ सिर्फ पक्का भोजन ही स्वीकार करते थे। अन्य उच्ची जातियां भी कुछ पिछड़ी जातियों के यहां पक्का भोजन ही स्वीकार करते थे। कुछ के हाथ का पानी स्वीकार करते थे जबकि कुछ का छुआ हुआ पानी भी स्वीकार नहीं करते थे। इस स्थति में मामूली परिवर्तन देखने को मिलता है। सामूहिक भोजन में ऊँची जाति के लोगों को सबसे पहले खिलाया जाता है और सबसे बाद में अछूतों को। खान–पान सम्बोधन इत्यादि में भी परिवर्तन आया है। ठाकुरों एवं अन्य उच्ची जातियों के साथ सम्बोधन में परिवर्तन प्रारम्भ हो गया है। अब पिछड़ी व अनुसूचित जाति के लोग भी सामाजिक सम्मान की अपेक्षा करने लगे हैं, और उच्ची जाति के लोग भी कुछ पिछड़ी व अनुसूचित जाति के लोगों को औपचारिक सम्मान करने लगे हैं। विशेषकर ब्राह्मणों के सामाजिक सम्मान में कमी आयी है, लेकिन विषमता पूर्ण व्यवहार प्रतिमान के अवशेष कायम है।

5 जाति पंचायत का ह्रासः–गाँव में प्रत्येक जाति का जाति पंचायत होता था, जिसके आदेशों एवं निर्देशों का पालन उस जाति के लोग करते थे। जाति पंचायत जाति की समस्याओं को मिटाने के साथ–साथ जाति की उन्नति के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य, प्रशिक्षण, जीवन साथी के चुनाव में मदद, विवाह विच्छेद को रोकने इत्यादि का काम करते थे। जाति पंचायत अपनी जाति की सामाजिक–आर्थिक, उन्नति के साथ–साथ अपने अपने जाति के लोगों के व्यवहारो पर भी प्रतिबन्ध लगाते थे। यदि जाति का कोई व्यक्ति जाति नियमों का उल्लंघन करता था तो उसे हुक्का पानी बन्द कर जाति बहिष्कार के अतिरिक्त, सामाजिक, आर्थिक दण्ड देते थे। जाति के बुजुर्ग व सम्मानित व्यक्ति इसके पदाधिकारी होते थे, यहाँ तक की जाति पंचायतों का निर्णय न्यायलय तक में साक्ष्य स्वरूप पेश किये

जाते थे। लेकिन वर्तमान में जाति पंचायत के कार्यों में कमी आयी है अब जाति पंचायत सामाजिक, आर्थिक कार्यों की अपेक्षा राजनीतिक ध्रुवीकरण के लिए कार्य करती है, अब लोग जाति पंचायत के निर्णयों को मानने के लिए बाध्य नहीं हैं।

6 शिक्षा में परिवर्तनः– ग्रामीण समुदाय में अशिक्षा का साम्राज्य था। सैकड़ों वर्ष पूर्व अनुसूचित जाति व पिछड़ी जाति को पढ़ने का अधिकार नहीं था। शिक्षा मूलरूप से उच्ची जातियों विशेषकर ब्राह्मणों का विशेषाधिकार माना जाता था। ग्रामीण शिक्षा मूलतः धर्म व नैतिकता पर आधारित होती थी। भाषा के रूप में संस्कृत व मातृ भाषा की प्रधाानता थी। शिक्षा का उद्देश्य आत्म निर्भर व सामुदायिक जीवन के योग्य बनाना माना जाता था। वर्तमान की तरह परीक्षा प्रणाली नहीं थी। कुल मिलाकर लोगों को सामाजिक, व्यवहारिक, चारित्रिक, धार्मिक ज्ञान दिया जाता था। अधिकांश शिक्षक ऊँची जाति विशेषकर ब्राह्मण हुआ करते थे।लेकिन समाज सुधार आन्दोलन व अंग्रेजों शासन काल में बनाए गये अधिनियम के कारण पिछड़ी एवम अनुसूचित जाति में शिक्षा का प्रसार हुआ, विशेषकर आरक्षण व्यवस्था से अनुसूचित जाति व पिछड़ी जातियों में शिक्षा का न सिर्फ प्रसार हुआ बिल्क इन वर्गों से उच्च शिक्षित लोगों की संख्या में दिन प्रतिदिन बृद्धि हो रही है। साथ–ही–साथ महिला शिक्षा का भी प्रसार हुआ है। और ग्रामीण समुदाय की लड़कियां भी अब शिक्षा ग्रहण कर रही हैं।वर्तमान में शिक्षा ज्ञान के साथ–साथ रोजगारपरक हो रहा हैअब गाँव के लोग आई0टी0आई0, प्रौद्योगिकी, चिकित्सक, प्रबन्धन व अन्य व्यवसायिक ज्ञान प्राप्त कर रहे हैं। औपचारिक शिक्षा, प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च, उच्चतर के रूप में विभाजित है।

7 महिलाओं की प्रस्थिति में परिवर्तनः–भारतीय समाज व्यवस्था में समस्त स्त्रियों को शूद्र की श्रेणी में रख गया है, क्योंकि इनका उपनयन संस्कार नहीं होता है। परिणाम स्वरूप ये सभी प्रकार के अधिकारों से वंचित थी। मनुस्मृति के अनुसार महिलाएं बचपन में पिता के अधिन , युवावस्था में पति के अधिन व वृद्धावस्था में पुत्र के अधिन मानी गयी है। राम चरित्र मानस आदि में इन्हें सभी दुर्गुणों का खान माना गया है। इन्हें न तो शिक्षा न सम्पत्ति और नहीं अन्य क्षेत्रों में स्व निर्णय का अधिकार प्राप्त था। स्वर्ण स्त्रियाँ पर्दा–प्रथा का अनुपालन करती थी। वे घर के चहार दिवारी से बाहर नहीं जा सकती थी लेकिन वर्तमान में स्त्रियों की स्थिति में व्यापक सुधार हुआ है। अब वे सिर्फ शिक्षा ही ग्रहण नहीं

कर रही है। बल्कि उन्हें सम्पत्ति में भी अधिकार दिया गया है। वे विभिन्न संस्थाओं में सरकारी सेवक के रूप में कार्य कर रही हैं। स्वयं विवाह का निर्णय भी करने लगी हैं। अब महिलाएँ स्वलम्बी होने लगी हैं। कई महिलाओं के नाम आवास भूमि व बैंकों में नगद जमा है। महिलाएँ पुरूषों के साथ बराबर के व्यवहार की अपेक्षा करने लगी हैं, तथा यदाकदा उसके वर्चस्व को चुनौती भी देने लगती हैं। ग्रामीण स्तर पर पंचायत के चुनाव में वे सिर्फ मतदान ही नहीं कर रही बल्कि स्वयं उम्मीदवार बनकर ग्राम प्रधान, विधायक, सांसद बनने लगीं हैं। इस प्रकार महिलाओं की स्थिति में आमूल–चूल परिवर्तन हुआ है।

8 समुदायिकता की भावना में ह्रास– भारतीय ग्रामीण समाज में समुदायिक की भावना होती थी। गाँव के लोगों में प्रत्यक्ष अनौपचारिक व प्राथमिक सम्बन्ध होते थे। वे एक–दूसरे के सुख दुख में सहभागी बनते थे। गाँव के लोग एक दूसरे को चाचा, ताऊ, दादा, बाबा, भाई इत्यादि के सम्बोधन से सम्बोधित करते थे। किसी के नातेदार समस्त गाँव के नातेदार माने जाते थे। जैसा की एफ0जी0 बेली[10] ने लिखा है कुछ भी हो विभिन्न उत्पत्ति पेशों, भाषाओं और रूड़ियों के होते हुए भी ग्राम की जनसंख्या एक इकाई बन जाती है, जिसे उनमें सामुदायिकता की भावना बढ़ जाती है।अन्य गाँव से तनाव या संघर्ष की स्थिति में सभी ग्रामीण एक होकर उसका प्रतिकार करते थे। लेकिन अब समुदायिकता की भावना में कमी आई है। अब गाँव में भी अनौपचारिक सम्बन्ध बढ़ने लगे हैं। लोग एक दूसरे से घृणा–द्वेष रखते हैं। एक दूसरे के उन्नति से जलते हैं। यही कारण है कि अधिकांश गाँव में तनाव व संघर्ष की स्थिति बनी हुई है। ग्रामीण गुटबन्दी आम बात हो गयी है। प्रत्येक गाँव में कई गुट बने हुए हैं, जो एक–दूसरे को नुकसान यहाँ तक की हिंसा व प्रतिहिंसा भी करते हैं। नवीन ग्रामीण अध्ययनोंसे यह भी प्रकाश में आया है कि अब गाँव के लोग अन्य गाँव के लोगों से साठ–गांठ कर अपने ही गाँव के लोगों का नुकसान करते हैं।

9 ग्रामीण मनोरंजन की प्रकृति में परिवर्तन–विश्व के समस्त समाजों में कुछ न कुछ मनोरंजन के साधन व तरीके प्रचलित रहे हैं जिसे व्यक्ति उदासीनता, थकान, निराशा इत्यादि को दूर करने के साथ–साथ उमंग व उत्साह वृद्धि के लिए करते हैं। ग्रामीण भारत में मनोरंजन की प्रचुरता थी। जैसा कि कुरेनसन ने लिखा हैं पुरातन ग्राम केवल आर्थिक व प्रशासनिक इकाई नहीं थे बल्कि वे सहयोगिक एवं सांस्कृतिक पक्ष के केन्द्र भी थे। उनके

पास अपने त्यौहार, पर्व, लोक गीत, नृत्य व मेले थे। उन्होंने जनता को जीवन दिया। और उनके उत्साह को बनाए रखा है। ग्रामीण भारत के मनांरेजन के मूलतः पाँच अंग थे संगीत, कथा, कहानी, कहावते, पहेली, लोक नृत्य, खेल–कूद, नौटंकी संगीत हेतु परम्परागत वाद्ययन्त्र, ढोलक डफली, खंजरी, कर्ताल, झाल, मजीरा इत्यादि का उपयोग होता था। कथा, कहानी अधिकतर नैतिक, राजारानी, देवी–देवता व ईश्वर से जुड़े होते थे। प्रत्येक क्षेत्र के अपने लोक नृत्य थे, जिनमें स्त्री–पुरूष दोनों सम्मिलित होते थे। खेल–कूद में भाग–दौड़, कबड्डी, दंगल, कूद, गुल्ली डण्डा, आँख मिचौली, चौपड़, तास इत्यादि की प्रधानता थी। नाटक एवं नौटंकी के माध्यम से भी लोग मनोरंजन कर लिया करते थे। समस्त ग्रामीण मनोरंजन सामूहिकता पर आधारित था। लेकिन वर्तमान में ग्रामीण मनोरंजन में आमूल–चूल परिवर्तन हुआ है। अब गाँव में फुटवाल, क्रिकेट बैडमिन्टन, वालीबाल, संगीत हेतु रेडियों टेलिवीजन, माइक्रो फोन चलचित्र वाद्ययन्त्र के रूप में वैन्जो, गिटार, पियानों आदि का प्रचलन बढ़ रहा है। पूर्व में ग्रामीण मनोरंजन, व्यवसायिक नहीं था लोग स्वयं सुखानुभूति हेतु नृत, संगीत, गायन इत्यादि किया करते थे, अब ग्रामीण मनोरंजन की व्यवसायिकता एवं व्यक्तिवादिता की ओर बढ़ गयी है। लोग मनोरंजन के क्षेत्र में अपना कैरियर चुनने लगे हैं।

10 आर्थिक क्षेत्र में परिवर्तन– परम्परागत समुदाय में ग्रामीण अर्थ व्यवस्था कृषि, पशु–पालन व शिल्प कार्य पर आधारित था। लोग जैविक शक्ति व शारीरिक श्रम के द्वारा परम्परागत ढंग से मौसम पर आधारित कृषि कार्य व पशुपालन करते थे। जैसा की लॉरी नेल्सन[11] ने लिखा है कि कृषि और संग्रह कार्य ग्रामीण अर्थ व्यवस्था की आधार है। कृषक व ग्रामीण प्रायः पर्यावाची शब्द हैं। उत्पादन का उद्देश्य अपनी जरूरतों को पूरा करना होता था। लोग हल, बैल, से जुताई व वर्षा, तालाब, कुआ, पोखरा आदि से सिंचाई करते थे। सड़े हुए खार–पतवार व गोबर को खाद्य के रूप में उपयोग किया जाता था। गाँव में वस्तु विनिमय व श्रम विनिमय प्रचलित था। लोग अपने पराम्परागत व्यवसाय जो की पूर्व निर्धारित होता था,के द्वारा लोग अपनी जिविकोपार्जन करते थे। लेकिन ग्रामीण समुदाय की आर्थिक व्यवस्था में आमूल–चूल परिवर्तन हुए हैं। अब मशीनों व रसायनिक उर्वरक व कीटनाशक दवाओं के उपयोग के माध्यम से बाजार उन्नमुख (कैशक्रॉप) नकदी खेती होने लगा है। श्रमिक भी अब नकद मजदूरी पर काम करते हैं। वस्तु विनिमय के स्थान पर

मौद्रिक लेन–देन बढ़ा है। परम्परागत समाज में लोग सादा जीवन व्यतीत करते थे लेकिन वर्तमान में उपभोक्तावादी संस्कृति पनप रही है। परम्परागत गाँव में शाहूकारी व्यवस्था प्रचलित थी, जो उच्च व्याज दरों पर जरूरत मंदों को पैसे या अन्न दिया करते थे। इसके बदले में आभूषण, कृषि योग्य भूमि इत्यादि गिरवीं रखने की प्रथा थी, लेकिन वर्तमान में इसमें परिवर्तन हुआ है। अब लोग बैंकोंव सहकारी समितिओं इत्यादि से लेन–देन करने लगे हैं। इसके बावजूद किसी–न–किसी रूप में साहूकारी व्यवस्था प्रचलित है।

लोगों के व्यवसाय की प्रकृति में आमूल–चूल परिवर्तन हुए हैं। तुछ, गंदे व कम आय वाले व्यवसाय को छोड़कर लोग जाति निरपेक्ष व्यवासाय करने लगे हैं। सरकारी व नीजि क्षेत्रों में लोग कार्य करने लगे हैं। बन्धुआ मजदूरी की प्रथा लगभग समाप्त सी हो गयी है।

11 राजनीतिक परिवर्तन– ग्रामीण समुदाय की राजनीति जाति पंचायत व ग्राम पंचायत पर केन्द्रीत थी। प्रत्येक जाति की जाति पंचायत होती थी, जो जाति के अन्दर की समस्याओं आपसी झगड़ों,विवाह–विच्छेद, लेन–देन की समस्याओं को सुलझाते थे। जाति पंचायत में उस जाति के सम्मानित बुजूर्ग व अनुभवी लोग सम्मिलत होते थे। साथ–ही–साथ जाति पंचायत अपनी जाति के मान–सम्मान की भी लड़ाई लड़ता था। गाँव स्तर पर ग्राम पंचायत की व्यवस्था थी, जिसमें गाँव के सम्मानित बुर्जूग विशेषकर धनी लोग सदस्य होते थे। पंच परमेश्वर की संकलपना प्रचलित थीं। गाँव की शक्ति प्रबल जातियों के पास केन्द्रीत होती थी। जाति पंचायत व ग्राम पंचायत के प्रधान सामान्यतः वंशानुगत होते थे। ग्रामीण राजनीति में प्रायः यह देखा गया है कि पिछड़ी व निम्न जाति के लोग उच्च जाति के नेतृत्व को स्वीकार करते रहे हैं। लेकिन वर्तमान में ग्रामीण, राजनीति में आमूल–चूल परिवर्तन हुए हैं। यद्यपि जाति संगठन तो बने हुए हैं। लेकिन उनकी शक्ति में बहुत ह्रास हुआ है। अब औपचारिक ग्राम पंचायत का गठन हो गया है, जिसके सदस्य व प्रधान व्यस्क मताधिकार से चुने जाते हैं। अतः संख्या बल वाली जातियाँ अब राजनीति में आगे आ रही है। पूर्व में ग्रामीण राजनीति में अधिकांशतः अधिक आयु, उच्ची जाति,धनी पुरूष ही सक्रिय होते थे। लेकिन अब आरक्षण व शिक्षा के विकास के कारण पढ़े–लिखे युवा, निम्न सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि वाले भी ग्रामीण नेतृत्व प्रदान

कर रहे हैं। पूर्व में ग्रामीण राजनीति में महिलाओं की उपस्थिति नगण्य थी लेकिन वर्तमान में महिलाएँ भी ग्रामीण नेतृत्व में सहभागी बन रही हैं।

12 धार्मिक क्षेत्र में परिवर्तनः– परम्परागत ग्रामीण समाज भाग्य व भगवान में विश्वास करने वाले होते थे। वे ग्रामीण बृहद देवी, देवताओं, यथा ब्रम्ह्म, विष्णु, महेश, राम, कृष्ण इत्यादि के साथ–साथ सैकड़ों देवी देवताओं को मान्यता देते थे इनता ही नहीं वे कुल देवता ग्राम देवता व जाति विशेष के देवताओं को भी मानते थे। वे अपने साथ सुख व दुःख की स्थिति के लिए ईश्वर को उत्तरदायी मानते थे। मुख्य पर्वों में होली, दसहरा, दिवाली, रक्षाबन्धन सामूहिक रूप से मनाया करते थे। समय–समय पर राम लीला, कृष्ण लीला, यज्ञ, अखण्ड कीर्तन, भजन आदि का आयोजन करते थे। कुछ विशेष तीर्थस्थलों का भ्रमण भी करते थे, जिनमें संगम कुम्भ मेला, माघ मेला इत्यादि महत्वपूर्ण है।धर्म में लोगों की आस्था और विश्वास था। वे रामायण, महाभारत पुराण, की बातों को अकाट्य मानकर स्वीकार करते थे। असमय अकाल, बाढ़, असामयिक महामारी, असामयिक मौत को ईश्वर की नाराजगी के रूप में लोग मानते थे। इसके अतिरिक्त लोग प्रकृति पुजक थे। लेकिन वर्तमान में धार्मिक कर्मकाण्ड में व्यापक परविर्तन हुए है। किशोर व युवा धार्मिक क्रिया कर्म को मनोरंजन के रूप में आयोजित करने लगे हैं। कुछ लोग तार्किक रूप में भाग्य,भगवान व धार्मिक पुस्तकों पर प्रश्न चिन्ह खड़ा करने लगे हैं। पर्व, त्योहार मनाने के तरीके भी बदले हैं।

लोगों के वेशभूषा, उपकरण मनोरंजन के साधन इत्यादि के क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन देखे जा सकते है।इस प्रकार ग्रामीण समाज वर्तमान में संक्रमण के दौर से गूजर रहा है। गाँव से लोग वेतहासा शहरों की ओर पलायान कर रहे हैं। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि गाँव समाप्त हो रहा है।बल्कि ग्रामीणों के बीच सम्बन्धों की प्रकृति में परिवर्तन हो रहा है। अब वे अपनी सामाजिक–आर्थिक प्रगति पर विशेष बल देकर अपने जीवन स्तर को उच्चा उठाने का प्रयास कर रहे हैं। सादा जीवन, उच्च विचार का आदर्श लुप्त प्रायः हो गया। अब ग्रामीण लोग भी औपचारिक, प्रकृति से दूर, प्रदर्शनकारी जीवन जीने लगे हैं। परिणाम स्वरूप गाँवकी समस्याओं की प्रकृति में भी परिवर्तन आया है।

निष्कर्ष–उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर हम कह सकते है कि भारतीय ग्रामीण समुदय के परिवर्तित परिद्रश्य के मार्ग मे एकाधिक कारक है। वर्तमान भारतीय ग्रामीण समुदाय

परिवर्तन की प्रक्रियाओं के कारण परम्परागत से आधुनिक की ओर उन्मुख है। उसमें परम्परा एवं आधुनिकीकरण का सम्मिश्रण है। भारतीय ग्रामीण समुदाय संक्रमण काल से गुजर रहा है।वह न तो पूर्व की भाँति अपरिवर्तनशील व परम्परागत रहा और न ही अधिक गतिशील व आधुनिक ही बन पाया है, बल्कि परम्परा व आधुनिकता के बीच झुल्ला–झुल रहा है।

सन्दर्भ गन्थ

1. डी0एन0 मजुमदार : रेसेस एण्ड कल्चर्स ऑफ इण्डिया, एशिया पब्लिसिंग हाउस वाम्बे, पृ0सं0– 163.
2. टी0एल0 स्मिथ : द सोसियोलाजी ऑफ रूरल लाइफ, पृ0सं0– 20.
3. राबर्ट रेड फिल्ड : द लिटिल कम्यूनिटी द यूनिवर्सटी ऑफ शिकागो प्रेस, 1955 पृ0सं0–1.
4. सोरोकिन एण्ड जिमर मैन : फ्रिसयल्स ऑफ रूरल अरवन सोशियोलॉजी, न्यूयार्क, 1929, पृ0सं0–17
5. वट्रेण्ड एवं अन्य : रूरल शोसियोलॉजी, पृ0सं0– 25.
6. बर्ट्रेण्ड एवम अन्य : पूर्वोक्त, पृ0सं0– 29.
7. टी0एल0 स्मिथ : पूर्वोक्त, पृ.सं0–36.
8. बर्गेस एवम लॉक, द फैमिली, 1959, पृ0सं0–64
9. आस्कर लेविस : विलेज लाइफ इन नार्थन इण्डिया, पृ0सं0–160–61
10. एफ0 जी0 बेली : ऐन उड़ीया हिल विलेज, ई0 पी0 डब्लू, मार्च, 1953.
11. लॉरी नेल्सन : ''रूरल सोशियोलॉजी'', यूनिवर्सिटी ऑफ मिन्नीसोटा प्रेस, 1969, पृ0सं0–18